Shodhaytan - AISECT University Journal Vol II/Issue IV December 2015 ISSN : 2349-4190

वर्तमान परिपेक्ष्य में संत कबीर की समाजचेला भूमिका

डॉ. संगीता पाठक
आईसेक्ट विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत.

शोध सारांश

वैश्वीकरण के इस युग में भौगोलिक दूरियाँ कम हो रही हैं। सभ्यताओं और सांस्कृतियों का तेजी से सम्मिश्रण हो रहा हैं। संस्कारों की जडें गाहे–बगाहे हिलती सी नजर आती हैं। कहीं पश्चिमी सभ्यता हावी होते नजर आती है। कही व्यक्तिगत स्वार्थ अपने पैर पसारता नजर आता हैं। कहीं धर्म दंगे करवाता है तो कही क्षेत्रवाद बलवती हो जाता कहीं महिलाओं की अस्मिता दांव पर लगती हैं तो कही गरीबों के भूखे पेट सिसकते हैं, कुल मिला कर कहें तो यह परिवर्तन की क्रांति काल चल रहा हैं। ऐसे में जरुरत हैं हमारी प्राचीन गौरवशाली संस्कृति के मंथन की, संतो की सीख की, और संत साहित्य के पुनः अवलोकन की। वर्तमान समय में ऐसा नहीं है कि हमने वैज्ञानिक या वैचारिक यात्रा नहीं की निश्चय ही तरक्की के बहुत से सोपान हमने तय किये हैं किन्तु कुछ मूलभुत सिद्धातो. आदर्शो, सोच को हम कही पीछे छोड आए हैं। ऐसे में तारणहार के रुप में सहज ही संत कवि कबीर का स्मरण हो आना स्वाभाविक है। संत कबीर भक्ति काल के केश्वरवादी, मानवतावादी तथा प्रखर समाज सुधारक कवि थे। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तो उन्हें समन्वयवादी कवि मानते थे। वस्तुतः व्यक्ति सामाजिक परिस्थितियों की उपज होता हैं। कबीर जिस मध्यकाल में हुए थे वह उत्श्रृंखलता का समय था। समाज में जाति पॉति भेदभाव, छुआछुत, धार्मिक आडबंरों एंव पाखंडों का बोलबाला था। सामंतवादी समाज का विकृत रूप समाज को खाये जा रहा था। इस परिवेश में कबीर ने मानव –प्रेम के जिस उदात्त भाव का संदेश दिया, वह आज भी प्रासांगिक है।

विस्तार से कबीर को देखें समझें तो ना तो उन्हें पूर्ण समन्यव कहा जा सकता है, ना पूर्ण धर्म निरपेक्ष। फिर भी उनकी वाणी सामाजिक भेदभाव, धार्मिक पाखंड एवं आडम्बर, छुआछूत के विरूद्ध रही तथा मानव में किसी भी भेदभाव का निषेध करती है।

वर्तमान में भी विकृत रूप में पैर पसारी हुई वर्ण व्यवस्था या जन्मजात उच्चता और नीचता को तर्क, विश्वास शक्ति और दृढंता के साथ प्रबल चुनौती देने का कार्य कबीर ने पुरजोर तरीके से किया, जिसकी आज भी प्रासांगिकता है। कबीर ने डंके की चोट पर कहा–

"एक बूँद एकै मल मूतर– एक चाम एक गूदा।
एक जोति पैं सब उत्पनों, कौन बाम्हन कौन सूदा।।"

धर्म के नाम पर लोगों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करने, उन्हें बॉटने तथा उन्हें धार्मिक आडम्बरों में धकेलने वाले तथाकथित संत आज भी हमारे समाज में मौजूद है, तथा कबीर के समय भी थे। कबीर ने कड़ा विरोध करते हुए कहा था–

"मेको कहाँ ढूँढे बंदे मै तो तेरे पास में,
न मै मंदिर, ना मैं मस्जिद, ना काबै, कैलाश में"

"जौं तूं बांधन बंभनी जाया। तौं आन बाठ हवै क्यों नहीं आया।
जौ तू तूरकनीं जाया। तौ भीतर खतना क्यों न कराया।।"

कबीर वस्तुतः आत्मज्ञान पर अधिक जोर देते थे। कबीर ने अल्लाह, राम, रहीम, केशव तथा हरि और हजरत को एकता का प्रतिपादन "दुई जगदीस कहाँ ते आए कहु कौन भरमाया।" कहकर किया है। कबीर के एक ईश्वर की मान्यता और इस्लामी एकेश्वर संबंधी विचारधारा में मौलिक अन्तर है, कबीर जिस अल्लाह की बात करते हैं, वह निरंजन है। "एक निरंजन अलह मेरा हिन्दु तुरक दहुँ नहीं तेरा"

कबीर के अनुसार ईश्वर या अल्लाह सर्वव्यापी है। घर–घर में रम रहा है। स्वामी एक है किन्तु वह सबमें व्याप्त है।

कबीर का मानना था कि ऐसा ज्ञान जो मुक्ति नहीं बंधन की शिक्षा देता हो, उससे क्या फायदा । ऐसे ज्ञानियों से तो संसारी अच्छे हैं। भेदगावपूर्ण समाज जिसमें धर्म के आधार पर, अर्थ के आधार पर मानव–मानव के बीच गहरी खाई है, उसे कबीर ने अस्वीकार किया। किन्तु नैतिक मूल्यों के प्रति उनकी ललक हमेशा बनी रही। ये मूल्य थे– आस्तिकता (भावात्मक), प्रेम अहिंसा, समता, मनोनिग्रह, कर्त्तव्य और विचार की एकता के, जीवन की सहजता या आडम्बरहीनता के, सत्यता, सत्संगति, सारग्रहिता और विनय के।

कबीर निर्गुण के उपासक थे, किन्तु भक्त थे। कबीर की भक्ति–भावना अपने में पूर्ण जीवन–दर्शन थी। कबीर मानवता के सहज धरातल पर अभेद– दृष्टि की स्थापना करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने विविध धार्मिक, साम्प्रदायिक एवं जातिगत इकाईयों में बिखरे हुए मानव समुदाय को तात्विक एकता प्रदान की। कबीर वैयक्तिक स्तर पर भक्त को आत्म समर्पण की उस स्थिति तक पहुँचना चाहते थे जहाँ गुरू कृपा, आत्मविश्वास, सत्संगति, निष्ठा एक साथ है। भक्ति की यह साधना सर्व सुलभ नहीं है। कामी और इन्द्रिय लोलुप इसे प्राप्त नहीं कर सकते। भक्ति में कपट का व्यवहार नहीं चल सकता। कबीर के अनुसार निश्छल मन ही भक्ति कर सकता है। इसीलिए कबीर अपने आराध्य को कभी 'बाप' कभी –जननी' कभी 'स्वामी' कभी 'पिड– कभी 'दोस्त' कभी 'पति' और कभी पाहनु कहते है।

कबीर ने माननीय प्रेम के उदात्त भावों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। वस्तुतः सभी धर्मों का एक सामान्य तत्व मानव–प्रेम है, जिसके द्वारा मानव–मानव में किसी भी तरह के भेद को अधार्मिक बताया है। कबीर इसी सच्चे प्रेम के पक्षधर व प्रतिपादक है।

सामाजिक विघटन, असमानता तथा व्याज्य धार्मिक पाखण्डों में तत्कालीन प्रचलित मान्यताओं तथा विश्वासों की बड़ी भूमिका होती है। कबीर ने इन्हें ध्वस्त करने का सार्थक प्रयास किया। कबीर ने उदात्त मानव–प्रेम, मूल्य बोध तथा सच्ची मानवता की भावना का पोषण किया। जिसमें किसी भी प्रकार की असमाजिक, अप्रिय भेदभाव पूर्ण भावना नहीं थी।

निर्भीक वाणी और विचारों वाले संत कबीर ने सन्त और साधु की चरित्र की मर्यादा का कभी उल्लंधन नहीं किया। कबीर ने संत की जो परिभाषा दी, कि किसी से बैर–भाव न रखना, निष्काम आचरण, ईश्वर में अनन्य निष्ठा, विषय–वासना से दूर इत्यादि का पूर्णतः पालन किया। कबीर के चरित्र की विशेषताओं में जहॉ निर्भीकता, स्पष्टवादिता, साहस और दृढ़ता है वहीं विनय, सरलता, वैराग्य, परदुःखकातरता तथा मनुष्य मात्र के प्रति समभाव भी है।

संत कबीर और उनके काव्य का प्रभाव आज भी प्रासांगिक व सर्वमान्य है। उन्होंने जिन दो प्रमुख धर्म जातियों का सर्वाधिक विरोध किया वे दोनों (हिन्दू और मुसलमान)। उन्हें कठोर–कर्कश मानते हुए भी अपना स्नेही मानती है। यही कबीर की विजय है। कबीर ने एक साथ कई व्यक्तित्व समेटे हुए जीवन जीया। वे सन्त, भक्त, समाज–सुधारक, रहस्यवादी, योगी, प्रेमी, क्रांतिकारी, व्यंग्यकर्ता, जनवादी, अद्वैतवादी, न जाने किस–किस चेतना को जी रहे थे। हम कह सकते हैं कि उनमें तुलसी की अनन्यता, सूर का श्रृंगार, जायसी का रहस्य आदि से लेकर भारतेन्दु का समाज सुधार और निराला राहुल का विद्रोह एक साथ उपस्थित हुआ मिलता है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कह सकते हैं कि कबीर और उनके काव्य गुणों ने सैकड़ों वर्षो से उन्हें साधारण जनता का नेता और साथी बना दिया। वे केवल श्रद्धा और भक्ति के पात्र ही नहीं, प्रेम और विश्वास के आस्पद भी बन गयें है। सच पूछा जाए तो जनता कबीरदास पर श्रद्धा करने की अपेक्षा प्रेम अधिक करती है। वे केवल नेता और गुरू नहीं साथी और मित्र भी है।

संक्षेप में संत कबीर की जितनी प्रासांगिता तत्कालीन समय में थी, उतनी ही वर्तमान में भी है।

ज्ञान अनुभव व उदात्त विचारों की त्रिवेणी से लबालब कबीर, निर्भीक, साहसी, स्पष्टवादी व दृढ़ कबीर, विनय सरलता, वैराग्य पर दुःखकातरता व मनुष्य मात्र के प्रेमी कबीर की भूमिका उनकी सीख, उनकी दिखाई राह आज के संदर्भ में न केवल अपेक्ष्य है, अपितु अनुकरणीय भी हैं।

संदर्भ सूची

[1] कबीर ग्रंथावली, पदावली 57 पृ. 106 सभा संस्करण 1928 ई.

[2] हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय पृ. 95

[3] कबीर ग्रंथावली पृ. 202 पद 338

[4] वही पृ. 200 पद 331

[5] वही पृ. 182 पद 276

[6] मध्ययुगीन काव्य साधना– डॉ. रामचन्द्र तिवारी

[7] कबीर ग्रंथावली, पृ. 207, साखी 357, पृ. 123 साखी 111, पृ. 68 साखी पृ. 20, साखी–4, पृ. 29, साखी 12, पृ. उपसाखी 16 पृ. 87 पद।

[8] हिन्दी साहित्य का इतिहास–विजयेन्द्र स्नातक पृ 50

[9] मध्यकालीन हिन्दी काव्य और कवि–डॉ सुरेशचन्द निर्मल पृ. 112